भारत सरकार

भारत
का
विधि
आयोग

परिवादों का प्रत्यावर्तन समर्थ बनाने वाला दंड प्रक्रिया संहिता का संशोधन ।

रिपोर्ट सं. 233

अगस्त, 2009

भारत का विधि आयोग

(रिपोर्ट सं. 233)

परिवादों का प्रत्यावर्तन समर्थ बनाने वाला दंड प्रक्रिया संहिता का संशोधन

केंद्रीय विधि और न्याय मंत्री, विधि और न्याय मंत्रालय, भारत सरकार को डा. न्यायमूर्ति एआर. लक्ष्मणन्, अध्यक्ष, भारत का विधि आयोग द्वारा 22 अगस्त, 2009 को प्रस्तुत की गई ।

18वें विधि आयोग का 1 सितंबर, 2006 से तीन वर्ष की अवधि के लिए भारत सरकार के विधि और न्याय मंत्रालय के विधि कार्य विभाग, नई दिल्ली के तारीख 16 अक्तूबर, 2006 के आदेश सं. ए-45012/1/2006-प्रशा.III (वि.का.) द्वारा गठन किया गया था ।

विधि आयोग अध्यक्ष, सदस्य-सचिव, एक पूर्णकालिक सदस्य और 7 अंशकालिक सदस्यों से मिलकर बना है ।

अध्यक्ष

माननीय डा. न्यायमूर्ति एआर. लक्ष्मणन्

सदस्य-सचिव

डा. ब्रह्म ए. अग्रवाल

पूर्णकालिक सदस्य

प्रो. डा. ताहिर महमूद

अंशकालिक सदस्य

डा. (श्रीमती) देविन्दर कुमारी रहेजा
डा. के. एन. चंद्रशेखरन पिल्लै
प्रो. (श्रीमती) लक्ष्मी जमभोलकर
श्रीमती कीर्ति सिंह
श्री न्यायमूर्ति आई. वेंकटनारायण
श्री ओ. पी. शर्मा
डा. (श्रीमती) श्यामल्हा पप्पू

विधि आयोग भारतीय विधि संस्थान भवन,
दूसरी मंजिल, भगवान दास रोड,
नई दिल्ली - 110 001 में अवस्थित है

विधि आयोग कर्मचारिवृंद

सदस्य - सचिव

डा. ब्रह्म ए. अग्रवाल

अनुसंधान कर्मचारिवृंद

श्री सुशील कुमार	:	संयुक्त सचिव एवं विधि अधिकारी
श्रीमती पवन शर्मा	:	अपर विधि अधिकारी
श्री जे. टी. सुलक्षण राव	:	अपर विधि अधिकारी
श्री ए. के. उपाध्याय	:	उप विधि अधिकारी
डा. वी. के. सिंह	:	सहायक विधि सलाहकार
डा. आर. एस. श्रीनेत	:	अधीक्षक (विधिक)

प्रशासनिक कर्मचारिवृंद

श्री सुशील कुमार	:	संयुक्त सचिव एवं विधि अधिकारी
श्री डी. चौधरी	:	अवर सचिव
श्री एस. के. बसु	:	अनुभाग अधिकारी
श्रीमती रजनी शर्मा	:	सहायक पुस्तकालय और सूचना अधिकारी

इस रिपोर्ट का पाठ इंटरनेट पर http://www.lawcommissionofindia.nic.in पर उपलब्ध है

© भारत सरकार
भारत का विधि आयोग

इस दस्तावेज का पाठ (सरकारी चिह्नों को छोड़कर) किसी रूप विधान में या किसी माध्यम से निःशुल्क प्रत्युत्पादित किया जा सकता है परंतु यह कि उसको शुद्ध रूप से प्रत्युत्पादित किया जाए और उसका भ्रामक संदर्भ में उपयोग न किया जाए । इस सामग्री को सरकार के प्रतिलिप्यधिकार के रूप में अभिस्वीकार किया जाना चाहिए और दस्तावेज का नाम विनिर्दिष्ट किया जाना चाहिए ।

इस रिपोर्ट से संबंधित किसी पूछताछ के लिए सदस्य-सचिव को डाक द्वारा भारत का विधि आयोग, दूसरी मंजिल, भारतीय विधि संस्थान भवन, भगवान दास रोड, नई दिल्ली- 110 001, भारत के पते पर पत्र भेजकर या ई-मेल द्वारा : **lci-dla@nic.in** पर संबोधित किया जाना चाहिए ।

डा. न्यायमूर्ति एआर. लक्ष्मणन्
(भूतपूर्व न्यायाधीश, भारत का उच्चतम न्यायालय)
अध्यक्ष, भारत का विधि आयोग

भा. वि. सं. भवन (दूसरा तल),
भगवान दास रोड,
नई दिल्ली-110001
टेली. : 91-11-23384475
फैक्स : 91-11-23383564

अ.शा.पत्र सं. 6(3)177/2009-वि.आ.(वि.अ.)

22 अगस्त, 2009

प्रिय डा. वीरप्पा मोइली जी,

विषय : परिवादों का प्रत्यावर्तन समर्थ बनाने वाला दंड प्रक्रिया संहिता का संशोधन ।

मैं उपर्युक्त विषय पर भारत की विधि आयोग की 233वीं रिपोर्ट इसके साथ अग्रेषित कर रहा हूं ।

2. किसी दंड न्यायालय के पास व्यतिक्रम में खारिज किए गए किसी परिवाद को प्रत्यावर्तित करने की कोई शक्ति नहीं है क्योंकि अपराधी मामले पर - वह वारंट मामला है या समन मामला है, निर्भर करते हुए उन्मोचित या दोषमुक्त हो जाता है । किसी परिवाद को प्रत्यावर्तित कराने के लिए किसी परिवादी को, चाहे वह गरीब हो या अमीर, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाना पड़ता है । यदि किसी मजिस्ट्रेट के पास किसी परिवाद को ग्रहण करने की और अपराधी को समन करने के पश्चात् गुणागुण पर उसका विनिश्चय करने की शक्ति है तो उसके पास अच्छा और पर्याप्त कारण दर्शित किए जाने पर उसको प्रत्यावर्तित करने की और गुणागुण पर विचारण का सामना करने के लिए अभियुक्त को पुनः समन करने की शक्ति भी होनी चाहिए ।

3. हमने इस रिपोर्ट में दंड प्रक्रिया संहिता की धाराओं 249 और 256 में, सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 9 के आधारों पर उपबंधों को अंतःस्थापित करते हुए, परिवादों का प्रत्यावर्तन समर्थ बनाने वाले समुचित संशोधनों की सिफारिश की है ।

सादर

भवदीय,

ह/-

(डा. न्यायमूर्ति एआर. लक्ष्मणन्)

डा. एम. वीरप्पा मोइली,
केंद्रीय विधि और न्याय मंत्री,
भारत सरकार,
शास्त्री भवन, नई दिल्ली - 110001

निवास : संख्या 1, जनपथ, नई दिल्ली 110001. टेलीफोन नं. : 91-11-23019465, 23793488, 23792745
ई-मेल : ch.lc@sb.nic.in

परिवादों का प्रत्यावर्तन समर्थ बनाने वाला दंड प्रक्रिया संहिता का संशोधन

विषय-वस्तु

		पृष्ठ सं.
I :	प्रस्तावना	8-15
II :	विधि आयोग की 141वीं रिपोर्ट	16
III :	सिफारिश	17

1. प्रस्तावना

1.1 यह सुनिश्चित विधि है कि किसी दंड न्यायालय के पास व्यतिक्रम में खारिज किए गए किसी परिवाद को प्रत्यावर्तित करने की कोई शक्ति, उसके समान जो कोई सिविल न्यायालय सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 9 के अधीन रखता है, नहीं है क्योंकि अपराधी मामले पर - वह वारंट मामला है या समन मामला है - निर्भर करते हुए उन्मोचित या दोषमुक्त हो जाता है । किसी परिवाद को प्रत्यावर्तित कराने के लिए किसी परिवादी को, चाहे वह गरीब हो या अमीर, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 482 के अधीन उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाना पड़ता है । यदि किसी मजिस्ट्रेट के पास किसी परिवाद को ग्रहण करने की और अपराधी को समन करने के पश्चात् गुणागुण पर उसका विनिश्चय करने की शक्ति है तो उसके पास अच्छा और पर्याप्त कारण दर्शित किए जाने पर उसको प्रत्यावर्तित करने की और गुणागुण पर विचारण का सामना करने के लिए अभियुक्त को पुनः समन करने की शक्ति भी होनी चाहिए ।

1.2. दंड प्रक्रिया संहिता में सुसंगत उपबंध निम्नलिखित हैं :

(i) वारंट - मामलों से संबंधित **धारा 249** -

"*परिवादी की अनुपस्थिति* - जब कार्यवाही परिवाद पर संस्थित की जाती है और मामले की सुनवाई के लिए नियत किसी दिन परिवादी अनुपस्थित है और अपराध का विधिपूर्वक शमन किया जा सकता है या वह संज्ञेय अपराध नहीं है, तब मजिस्ट्रेट इसमें इसके पूर्व किसी बात के होते हुए भी आरोप के विरचित किए जाने के पूर्व किसी भी समय अभियुक्त को, स्वविवेकानुसार, उन्मोचित कर सकेगा।"

(ii) समन - मामलों से संबंधित **धारा 256** -

"*परिवादी का हाजिर न होना या उसकी मृत्यु* - (1) यदि परिवाद पर समन जारी कर दिया गया हो और अभियुक्त की हाजिरी के लिए नियत दिन, या उसके पश्चात्वर्ती किसी दिन, जिसके लिए सुनवाई स्थगित की जाती है, परिवादी हाजिर नहीं होता है तो, मजिस्ट्रेट इसमें इसके पूर्व किसी बात के होते हुए भी, अभियुक्त को दोषमुक्त कर देगा जब तक कि वह किन्हीं कारणों से किसी अन्य दिन के लिए मामले की सुनवाई स्थगित करना ठीक न समझे :

परंतु जहां परिवादी का प्रतिनिधित्व प्लीडर द्वारा या अभियोजन का संचालन करने वाले अधिकारी द्वारा किया जाता है या जहां मजिस्ट्रेट की यह राय है कि परिवादी की वैयक्तिक हाजिरी आवश्यक नहीं है वहां मजिस्ट्रेट उसकी हाजिरी से उसे अभिमुक्ति दे सकता है और मामले में कार्यवाही कर सकता है ।

(2) उपधारा (1) के उपबंध जहां तक हो सके, उन मामलों को भी लागू होंगे, जहां परिवादी के हाजिर न होने का कारण उसकी मृत्यु है ।"

1.3. धारा 249 उन मामलों में लागू नहीं होगी जिसमें मजिस्ट्रेट ऐसे अपराधों के लिए अभियुक्त का विचारण करता है जो अशमनीय और संज्ञेय हैं । यह धारा केवल उन अपराधों को लागू होती है जो विधिपूर्ण रूप से शमनित किए जा सकते हैं या असंज्ञेय हैं । अतः मजिस्ट्रेट के पास अभियुक्त को उन्मोचित करने का कोई विवेकाधिकार नहीं है जब अपराध गंभीर प्रकृति के हैं । दंड प्रक्रिया संहिता का अध्याय 19 जिसमें मजिस्ट्रेटों द्वारा वारंट मामलों के विचारण के लिए प्रक्रिया अंतर्वलित है, दो प्रक्रियाओं को विहित करता है, एक पुलिस रिपोर्टों पर संस्थित किए गए मामलों के विचारण के लिए और दूसरी निजी परिवादों पर संस्थित किए गए मामलों के विचारण के लिए । विधि निर्माताओं ने अशमनीय और संज्ञेय अपराधों को धारा 249 के क्षेत्र से पृथक कर दिया है क्योंकि अधिक गंभीर अपराधों के लिए पुलिस, साधारणतया, आरोप-पत्र फाइल करती है ।

1.4 उन अपराधों के संबंध में जो शमनीय और असंज्ञेय हैं, जहां मजिस्ट्रेट को परिवादी की अनुपस्थिति के लिए अभियुक्त को उन्मोचित करने का विवेकाधिकार दिया गया है, वहां मजिस्ट्रेट में, फाइल पर परिवाद को प्रत्यावर्तित करने की शक्ति, यदि परिवादी द्वारा सुनवाई की तारीख को अपनी अनुपस्थिति के लिए पर्याप्त कारण दर्शित किया जाता है तो, निहित की जा सकती है ।

1.5 सुनवाई की तारीख को परिवादी की अनुपस्थिति के लिए विभिन्न कारण हो सकते हैं । एक अत्यधिक महत्वपूर्ण कारण राजनीतिक पार्टियों द्वारा किया गया पूर्ण बंद का आहवान या हड़ताल, जहां परिवहन सार्वजनिक और प्राइवेट दोनों पूर्ण रूप से निलंबित हो जाते हैं, हो सकता है । यह परिवादी के न्यायालय के समक्ष उपसंजात होने से अनुपस्थित रहने का वास्तविक कारण है । परिवादी को न्यायालय जाते हुए मार्ग में गंभीर कठिनाई हो सकती है जिससे उसे अस्पताल में जाकर रहने की आवश्यकता पड़े । वह (क) गहन खिन्नता, (ख) उच्च रक्तचाप, (ग) गहरी मुर्छा में ले जाने वाली लो-शुगर या (घ) चक्कर आने वाले रोग आदि से पीड़ित हो सकता है । किसी घनिष्ठ संबंधी की मृत्यु दूसरा पर्याप्त कारण हो सकता है ।

1.6 इस प्रकार प्रत्येक मामले में, यदि परिवादी अपनी अनुपस्थिति के लिए पर्याप्त कारण दर्शित करता है तो मजिस्ट्रेट फाइल पर उसके परिवाद को प्रत्यावर्तित कर सकता है । यह अवधि आवेदन देने के लिए अपराधी के उन्मोचन की तारीख से 15 दिन या 30 दिन की हो सकती है ।

1.7 समन मामलों के विचारण के बारे में, धारा 256 के अधीन, मजिस्ट्रेट अभियुक्त को दोषमुक्त करेगा यदि परिवादी सुनवाई की तारीख को प्रस्तुत नहीं होता है । धारा 256 का परंतुक कहता है कि जहां परिवादी का प्रतिनिधित्व किसी प्लीडर द्वारा या अभियोजन संचालित करने वाले अधिकारी द्वारा या जहां मजिस्ट्रेट की यह राय है कि परिवादी की

व्यक्तिगत हाजिरी आवश्यक नहीं है, वहां मजिस्ट्रेट उसको हाजिरी से मुक्ति दे सकता है और मामले में कार्यवाही कर सकता है । यहां भी परिवादी की अनुपस्थिति के लिए पर्याप्त कारण हो सकते हैं, जिन के उदाहरण पूर्ववर्ती पैराओं में दिए गए हैं । धारा 256 के अधीन एक उपधारा इस आशय की जोड़ी जा सकती है कि यदि परिवादी सुनवाई की तारीख को अपनी अनुपस्थिति के लिए पर्याप्त कारण दर्शित करता है तो मजिस्ट्रेट फाइल पर परिवाद को प्रत्यावर्तित कर सकता है परंतु यह तब जब कि आवेदन अभियुक्त की दोषमुक्ति की तारीख से 15 दिन या 30 दिन के भीतर फाइल किया गया हो ।

1.8 सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 9 में, नियम 4, नियम 8 और नियम 9 यथा निम्नलिखित हैं :

(i) **नियम 4 -**

"*वादी नया वाद ला सकेगा या न्यायालय वाद को फाइल पर प्रत्यावर्तित कर सकेगा* - जहां वाद नियम 2 या नियम 3 के अधीन खारिज कर दिया जाता है वहां वादी नया वाद (परिसीमा विधि के अधीन रहते हुए) ला सकेगा या वह उस खारिजी को अपास्त कराने के आदेश के लिए आवेदन कर सकेगा और यदि वह न्यायालय का समाधान कर देता है, यथास्थिति, नियम 2 में निर्दिष्ट असफलता के लिए या उसकी अपनी अनुपसंजाति के लिए पर्याप्त हेतुक था तो न्यायालय खारिजी को अपास्त करने के लिए आदेश करेगा और वाद में आगे कार्यवाही करने के लिए दिन नियत करेगा ।"

(ii) **नियम 8 -**

"*जहां केवल प्रतिवादी उपसंजात होता है वहां प्रक्रिया* - जहां वाद की सुनवाई के

लिए पुकार होने पर प्रतिवादी उपसंजात होता है और वादी उपसंजात नहीं होता है वहां न्यायालय यह आदेश करेगा कि वाद को खारिज किया जाए । किंतु यदि प्रतिवादी दावे या उसके भाग को स्वीकार कर लेता है तो न्यायालय ऐसी स्वीकृति पर प्रतिवादी के विरुद्ध डिक्री पारित करेगा और जहां दावे का केवल भाग ही स्वीकार किया गया हो वहां वह वाद को वहां तक खारिज करेगा जहां तक उसका संबंध अवशिष्ट दावे से है ।"

(iii) **नियम 9 -**

"*व्यतिक्रम के कारण वादी के विरुद्ध पारित डिक्री नए वाद का वर्जन करती है* - (1) जहां वाद नियम 8 के अधीन पूर्णतः या भागतः खारिज कर दिया जाता है वहां वादी उसी वाद हेतुक के लिए नया वाद लाने से प्रवारित हो जाएगा । किंतु वह खारिजी को अपास्त करने के आदेश के लिए आवेदन कर सकेगा और यदि वह न्यायालय का समाधान कर देता है कि जब वाद की सुनवाई के लिए पुकार पड़ी थी उस समय उसकी अनुपसंजाति के लिए पर्याप्त हेतुक था तो न्यायालय खर्चों या अन्य बातों के बारे में ऐसे निबंधनों पर जो वह ठीक समझे, खारिजी को अपास्त करने का आदेश करेगा और वाद में आगे कार्यवाही करने के लिए दिन नियत करेगा ..... ।"

1.9 जब किसी वाद को, जो वादी की अनुपस्थिति के आधार पर खारिज किया गया है, प्रत्यावर्तित करने के लिए उपबंधों को उपबंधित किया गया है तब समरूप उपबंधों को दंड प्रक्रिया संहिता में भी उपबंधित किए जाने की आवश्यकता है ।

1.10 धारा 249 और धारा 256 के ऐसे उपबंधों की अनुपस्थिति में परिवादियों को दंड पुनरीक्षण के अधीन उच्च न्यायालय में आवेदन करना पड़ता है जहां अभियुक्त को

उन्मोचित किया गया है या दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में जाना पड़ता हैं जहां अभियुक्त को दोषमुक्त किया गया है । परिवादों के प्रत्यावर्तन के लिए उपबंधों को जोड़ने से, उच्च न्यायालयों पर बोझ कम हो जाएगा ।

अधीनस्थ न्यायालयों की अंतर्निहित शक्ति

1.11 अधीनस्थ दंड न्यायालयों के पास कोई अंतर्निहित शक्तियां नहीं हैं[1] । "न्याय का हित" सूत्र कानूनी उपबंधों के सीमांतों के परे अधीनस्थ दंड न्यायपालिका को उपलब्ध नहीं है और वह अन्वेषण के बरामदे में प्रवेश को समर्थ नहीं बनाता है[2] । तथापि न्यायालय न्याय देने के लिए और न कि तकनीकी कारणों से, जब विधि और न्याय अन्यथा मांग करते हैं, उससे इनकार करने के लिए विद्यमान हैं । यद्यपि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन व्यावृत्त अंतर्निहित शक्ति केवल उच्च न्यायालयों के पक्ष में है, तथापि अधीनस्थ दंड न्यायालय भी वह करने के लिए शक्तिहीन नहीं हैं, जो किसी विनिर्दिष्ट समर्थ बनाने वाले उपबंध की अनुपस्थिति में न्याय देने के लिए पूर्ण रूप से आवश्यक है, परंतु यह तब जबकि कोई प्रतिषेध न हो और कोई अवैधता न हो या घोर अन्याय अंतर्वलित हो । सभी दंड न्यायालयों के पास निर्बंधन के अधीन रहते हुए ऐसी अनुषंगी शक्ति है जिसकी न्याय, साम्यता, अच्छा अंतःकरण और विधिक उपबंध मांग करते हैं परंतु यह तब जब उससे किसी और पर अनावश्यक रूप से प्रतिकूल प्रभाव न पड़े[3] । राज्य अभियोजक[4] के मामले में केरल उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने अभिनिर्धारित किया था कि अधीनस्थ न्यायालय न्यायानुसार (न्याय की अपेक्षा के अनुसार) वास्तविक और सारवान न्याय करने के लिए, केवल जिसके लिए वे विद्यमान हैं, अंतर्निहित शक्ति रखते हैं । उक्त उपबंध में किसी अन्य दंड न्यायालय के प्रति किसी निर्देश की अनुपस्थिति से आवश्यक रूप से यह इंगित नहीं

---

[1] तुल्सम्मा ब. जगन्नाथ, 2004 क्रि. एल. जे. 4272.
[2] केरल राज्य ब. विजयन, 1985 (1) क्राइम्स 261.
[3] माधवी ब. थुप्रन, 1987 (1) के.एल.टी. 488.

होता है कि ऐसे न्यायालय किसी भी परिस्थिति में अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग नहीं कर सकते हैं । न्यायालय इस सिद्धांत पर कार्य कर सकते हैं कि प्रत्येक प्रक्रिया अनुज्ञेय समझी जानी चाहिए जब तक वह विधि द्वारा प्रतिषिद्ध दर्शित की गई हो ।

1.12 दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 से काफी मिलती-जुलती है । उक्त धारा के अधीन हस्तक्षेप करने के लिए तीन शर्तें पूरी होनी चाहिए । (1) वह अन्याय, जो सामने आता है, गंभीर प्रकृति का होना चाहिए और न कि तुच्छ प्रकृति का ; (2) वह स्पष्ट ओर प्रत्यक्ष होना चाहिए और संदेहपूर्ण नहीं तथा (3) वहां विधि का कोई अन्य ऐसा उपबंध विद्यमान न हो जिसके द्वारा व्यथित पक्षकार अनुतोष प्राप्त कर सकता हो ।[5]

1.13 **राजनरायण** बनाम **राज्य**[6] में और **बियाम्मा**[7] के प्रति निर्देश से, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि कोई उच्च न्यायालय किसी दंड पुनरीक्षण में अपने पूर्ववर्ती विनिश्चय को प्रतिसंहृत कर सकता है, उसका पुर्नविलोकन कर सकता है, उसे वापस मंगा सकता है या उसमें परिवर्तन कर सकता है और उक्त धारा के अधीन आरक्षित अपनी अंतर्निहित शक्ति के आधार पर उसकी पुनः सुनवाई कर सकता है ।

1.14 'प्रक्रिया' शब्द साधारण शब्द है जिसका अर्थ वास्तव में न्यायालय द्वारा की गई कोई बात है । इसके अंतर्गत किसी अधीनस्थ न्यायालय में की गई दंड कार्यवाहियां हैं । अतः अधीनस्थ दंड न्यायालय में उस परिवाद को, जो व्यतिक्रम द्वारा खारिज किया गया था, न्याय प्राप्त करने की दृष्टि से, प्रत्यावर्तित करने की शक्ति निहित होनी चाहिए । जब कभी मजिस्ट्रेट का समाधान हो जाता है कि न्याय के उद्देश्यों को सुनिश्चित करने के लिए

---

[4] 1973 क्रि. एल. जे. 1288.

[5] **राम नरायण** ब. मूलचंद, ए.आई.आर. 1960 ऑल 296. **जनता दल** ब. **एच. एस. चौधरी**, ए.आई.आर. 1993 एस.सी. 892.

[6] ए.आई.आर 1959 ऑल 315 (एफबी)

यह आवश्यक है, तो वह अपने पूर्ववर्ती आदेश में हस्तक्षेप करने में समर्थ होना चाहिए । न्यायालय को, जिसके पास किसी मामले को ग्रहण करने और सूचना का आदेश देने और गुणागुण पर मामले का विनिश्चय करने की शक्ति है, प्रकट गलती को ठीक करने की शक्ति भी होनी चाहिए ।

1.15 यदि कोई न्यायालय यह पाता है कि उसने पक्षकार को, जो स्वयं सुने जाने का या अपने काउंसेल के माध्यम से सुने जाने का हकदार था, सुने बिना, जो न्याय के हित में आवश्यक था, निर्णय परिदत्त कर दिया है, वहां न्यायालय को निर्णय को अपास्त करने के लिए और मामले की पुनः सुनवाई प्रदान करने के लिए सशक्त होना चाहिए । यह सच है कि दंड प्रक्रिया संहिता में उक्त आशय का कोई उपबंध नहीं है । तथापि न्याय के और न्यायपालिका की स्वतंत्रता के हित में, न्यायाधीशों और मजिस्ट्रेटों को, पक्षकारों के रूप में या साक्षियों के रूप में, अपने सामने व्यक्तियों के आचरण पर विचार-विमर्श करने की पूर्ण स्वतंत्रता होनी चाहिए । इस शक्ति का प्रयोग करते हुए, न्यायालयों को अपने मस्तिष्क में यह रखना चाहिए कि किसी व्यक्ति को सुने गए बिना बेकार नहीं ठहराया जाना चाहिए ।

1.16 तथापि उच्चतम न्यायालय ने **ए.एस. गौरैया** बनाम **एस. एन. ठाकुर**[8] में विनिर्दिष्ट रूप से यह आदेश दिया कि दंड प्रक्रिया संहिता में किसी मजिस्ट्रेट को परिवादी की गैरहाजिरी के लिए किसी परिवाद को खारिज करने वाले अपने पूर्ववर्ती आदेश को प्रतिसंहृत करके उसे प्रत्यावर्तित करने के लिए अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग करने हेतु उसे समर्थ बनाने वाला कोई उपबंध अंतर्विष्ट नहीं है ।

---

[7] ए.आई.आर 1963 मैसूर 326.

[8] (1986) 2 एस.सी.सी. 709.

II. विधि आयोग की 141वीं रिपोर्ट

2.1 भारत के 12वें विधि आयोग ने "दांडिक पुनरीक्षणात्मक आवेदनों और उपसंजात होने में व्यतिक्रम के लिए खारिज किए गए दांडिक मामलों को प्रत्यावर्तित करने के लिए न्यायालयों की शक्ति के संबंध में विधि का संशोधन करने के लिए आवश्यकता" (1991) नामक अपनी 141वीं रिपोर्ट में, अन्य बातों के साथ, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 256 के संशोधन की सिफारिश की थी, जिससे किसी दांडिक मामले को, जिसमें अभियुक्त को परिवादी की गैर उपसंजाती के लिए दोषमुक्त किया गया है, और जहां उपसंजात न होने के लिए पर्याप्त कारण है, प्रत्यावर्तित करने में समर्थ बनाया जा सके । किसी गुणागुण वाले परिवाद का इस आधार पर विरोध करने की अनुज्ञा नहीं दी जा सकती कि परिवादी उपस्थित रहने में असमर्थ था, यद्यपि ऐसी अनुपस्थिति के लिए अच्छा और पर्याप्त कारण विद्यमान था ।

2.2 विधि आयोग ने अपनी पूर्वोक्त रिपोर्ट में आगे उच्च न्यायालय से भिन्न सभी अधीनस्थ दंड न्यायालयों को भी अंतर्निहित शक्तियों को प्रदान करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के संशोधन की सिफारिश की थी ।

III. सिफारिश

3. हम इसके द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 249 और धारा 256 में, परिवादों का प्रत्यावर्तन समर्थ बनाने वाले उपबंधों को, सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 9 के आधार पर, अंतःस्थापित करने वाले समुचित संशोधनों की सिफारिश करते हैं ।

ह/-

(डा. न्यायमूर्ति एआर. लक्ष्मणन्)

अध्यक्ष

ह/-

(प्रा. (डा.) ताहिर महमूद)

सदस्य

ह/-

(डा. ब्रह्म ए. अग्रवाल)

सदस्य-सचिव